

इंदर सिंह

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

(सिविल अपील संख्या 4304/2025)

21 मार्च 2025

[सुधांशु धूलिया और अहसानुद्दीन अमानुल्लाह, न्यायमूर्तिगण]

विचारणीय प्रश्न

क्या उच्च न्यायालय का द्वितीय अपील प्रस्तुत करने में हुए विलंब को क्षमा करना न्यायोचित था।

शीर्ष टिप्पणियां

परिसीमा अधिनियम, 1963 - विलंब की माफी - कब न्यायोचित हो - अपीलार्थी और प्रत्यर्थी - राज्य के बीच ज़मीन के हक को लेकर विवाद - जिसमें राज्य ने दावा किया कि ज़मीन उसके कब्ज़े की शासकीय ज़मीन है - द्वितीय अपील प्रस्तुत करने में राज्य की ओर से 1537 दिनों के विलंब को उच्च न्यायालय ने माफ़ कर दिया - चुनौती:

अभिनिर्धारित : आक्षेपित आदेश को यथावत् रखा गया - हालांकि विलंब को बिना किसी पर्याप्त हेतुक के माफ नहीं किया जा सकता है, हालांकि, अगर किसी विशिष्ट मामले में, गुणागुणों की जांच की जानी है, तो उसे सिर्फ परिसीमा के आधार पर खत्म नहीं किया जाना चाहिए - वर्तमान मामले में, ज़मीन के हक का विवाद प्राइवेट पक्षकारों के बीच नहीं है, बल्कि प्राइवेट पक्षकारों और राज्य के बीच है - मामलों के तथ्यों के अनुसार, मामले में गुणागुण के आधार पर न्यायनिर्णयन करने की आवश्यकता है - इस तरह, मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों में, जिसमें राज्य ने दावा किया कि ज़मीन उसके कब्ज़े की शासकीय ज़मीन है, आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया गया और द्वितीय अपील का गुणागुणों के आधार पर विनिश्चय किया जाना है - हालांकि, विलंब को माफ कर दिया जाता है, बशर्ते कि प्रत्यर्थी अपीलार्थी को 50,000/- रुपये खर्च के रूप में दे, ऐसा न करने पर द्वितीय अपील खारिज समझी जाएगी। [पैरा 14, 15, 18, 19]

परिसीमा अधिनियम, 1963- भारत का संविधान - अनुच्छेद 12- राज्य द्वारा अपने कब्जे की शासकीय ज़मीन होने का दावा की गई ज़मीन के हक पर विवाद से जुड़ा मामला - द्वितीय अपील प्रस्तुत करने में राज्य की ओर से 1537 दिनों का विलंब माफ़ किया गया - राज्य को चेतावनी दी गई:

अभिनिर्धारित : राज्य को ऐसे मामलों में सावधान रहना चाहिए और तत्परता दिखानी चाहिए, ऐसा न करने पर न्यायालय उतना उदार नहीं हो सकता, इसलिए खर्च अधिरोपित किए जा सकते हैं-

साधारण मुकदमेबाज की तुलना में राज्य को कोई असम्यक् अनुग्रह नहीं दिया जा सकता, विशेषतः परिसीमा के मामलों में - सभी पक्षकारों को, चाहे वे राज्य के हों या नहीं, पूरी सावधानी और तत्परता से काम करना होगा। [पैरा 13, 18]

उद्धृत विधि

शिव राज सिंह बनाम भारत संघ [2023] 13 एससीआर 743: (2023) 10 एससीसी 531; रामचंद्र शंकर देवधर बनाम महाराष्ट्र राज्य [1974] 2 एससीआर 216: (1974) 1 एससीसी 317; ए बी गोवर्धन बनाम पी राघोथमन [2024] 8 एससीआर 1002: (2024) 10 एससीसी 613 - का अवलंब लिया गया।

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सतीश चंद शिवहरे एंड ब्रदर्स, 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 2151; मणिपुर राज्य बनाम कोटिन लामकांग [2019] 13 एससीआर 565: (2019) 10 एससीसी 408; पथपति सुब्बा रेड्डी बनाम विशेष डिप्टी कलेक्टर [2024] 4 एससीआर 241: 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 513; बिहार राज्य बनाम कामेश्वर प्रसाद सिंह [2000] 3 एससीआर 764: (2000) 9 एससीसी 94; पश्चिम बंगाल राज्य बनाम प्रशासक, हावड़ा नगर पालिका [1972] 2 एससीआर 874: (1972) 1 एससीसी 366 - को संदर्भित किया गया।

अधिनियमों की सूची

परिसीमा अधिनियम, 1963, भारत का संविधान।

कुंजी शब्दों (कीवर्ड) की सूची

विलंब की माफी; द्वितीय अपील; पर्याप्त हेतु; ज़मीन पर कब्ज़ा; शासकीय ज़मीन; वादग्रस्त संपत्ति; असम्यक् अनुग्रह; सम्यक् तत्परता; तत्परता; परिसीमा; 1537 दिनों का विलंब; ज़मीन के हक पर विवाद; प्राइवेट पक्षकार; विधिक उपचार; उदार दृष्टिकोण; द्वितीय अपील का गुणागुण पर विनिश्चय किया जाना; भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के तहत राज्य; साधारण मुकदमेबाज; खर्च।

मामला उत्पन्न अंतर्गत

सिविल अपीलीय अधिकार क्षेत्र: सिविल अपील संख्या 4304/2025

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, ग्वालियर के IA No. 2022 /2020 के दिनांक 29.01.2024 के निर्णय और आदेश से

पक्षकारों की ओर से उपस्थिति

अपीलार्थी की ओर से अधिवक्ता :

अर्जुन गर्ग।

प्रत्यर्थी की ओर से अधिवक्तागण :

अमित शर्मा, ए.ए.जी., सरद कुमार सिंघानिया, क्षितिज सिंह।

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

निर्णय

अहसानुद्दीन अमानुल्लाह, न्यायामूर्ति

अनुमति अनुदत्त की गई।

2. यह अपील मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, खण्डपीठ ग्वालियर (जिसे आगे 'उच्च न्यायालय' कहा जाएगा) की विद्वान एकल पीठ के I.A. नंबर 2022/2020 में पारित किए गए आदेश दिनांक 29.01.2024 (जिसे आगे 'आक्षेपित आदेश' कहा जाएगा) के विरुद्ध है, जो प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत की गयी द्वितीय अपील संख्या 1253/2020 में था, जिसके तहत परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 के तहत द्वितीय अपील प्रस्तुत करने में विलंब के लिए माफी चाहने वाली I.A. को इस निर्देश के साथ अनुमति दी गई है कि द्वितीय अपील को स्वीकृति पर सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया जाए और साथ में स्थगन आवेदन भी लगाया जाए।

तथ्य:

3. दिनांक 14.12.2012 को, अपीलार्थी ने द्वितीय अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, वर्ग-1, अशोकनगर, मध्य प्रदेश (जिसे आगे 'विचारण न्यायालय' कहा जाएगा) के समक्ष सिविल वाद संख्या 17-A/2013 (जिसे आगे 'वाद' कहा जाएगा) संस्थित किया। इसमें भूमि सर्वे क्रं 8/1, जिसका रकबा 1.060 हेक्टेयर है (जिसे आगे 'वादग्रस्त संपत्ति' कहा जाएगा) के हक, कब्जा और स्थायी व्यादेश की घोषणा के लिए अपील प्रस्तुत की गई थी, जो मोहरीराय गांव, तहसील और जिला अशोकनगर में स्थित है। इसमें कहा गया था कि दिनांक 30.08.1977 का एक आदेश उसके पक्ष में पारित हुआ था, जिसमें उसे वादग्रस्त संपत्ति आवंटित की गई थी। इसके बाद, त्रुटिवश, अपीलार्थी यानी इंदर सिंह की जगह, राजस्व अभिलेख में ईश्वर सिंह का नाम गलत तरीके से दर्ज हो गया था। अपीलार्थी ने ग्वालियर के अपर कलेक्टर के समक्ष दिनांक 24.08.1978 के आदेश के द्वारा एक आवेदन प्रस्तुत किया था, जिस पर अपीलार्थी ने यह त्रुटि ठीक की थी। इसके बाद, अपीलार्थी ने वादग्रस्त संपत्ति में कुआँ खोदने के लिए बैंक से उधार लिया। वाद में आगे यह भी प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को बिना किसी पूर्व नोटिस के, प्रश्नगत ज़मीन को 'शासकीय ज़मीन' घोषित कर दिया था।

4. प्रत्यर्थी-राज्य ने विचारण न्यायालय में अपीलार्थी के अभिवचनों का जवाब दिया। राज्य ने प्रतिवाद किया कि भूमि सर्वे संख्या 1 का पूरा 5.696 हेक्टेयर रकबा शुरू से ही शासकीय ज़मीन थी और ऊपर बताई गई ज़मीन को चरागाह के तौर पर अभिलिखित किया गया है, जिसमें से, तहसीलदार अशोकनगर के प्रकरण क्रं 15A6A/05-06 में दिनांक 14.09.2006 के आदेश से, 2.090 हेक्टेयर ज़मीन यूथ वेलफेयर डिपार्टमेंट के लिए और बाकी 3.606 हेक्टेयर ज़मीन कलेक्ट्रेट के लिए आरक्षित की गई थी। इस बात से इनकार किया गया कि अपीलार्थी का कभी ज़मीन पर कब्ज़ा था।

5. विचारण न्यायालय ने दिनांक 16.08.2013 को वाद खारिज कर दिया, जिसके विरुद्ध अपीलार्थी ने द्वितीय अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, अशोकनगर (जिसे आगे 'प्रथम अपीलीय न्यायालय' कहा जाएगा) के समक्ष सिविल अपील संख्या 32A/2015 प्रस्तुत की, जिसे दिनांक 01.10.2015 के आदेश से विचारण न्यायालय के दिनांक 16.08.2013 के निर्णय को पलटते हुए स्वीकृति दे दी गई। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपीलार्थी को वादग्रस्त संपत्ति का भूमि स्वामी घोषित कर दिया।

6. प्रत्यर्थी ने प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष प्रकरण क्रं 92/2018 से एक पुनर्विलोकन याचिका प्रस्तुत की, जिसे दिनांक 30.09.2019 को विलंब के आधार पर खारिज कर दिया गया, क्योंकि प्रत्यर्थी की तरफ से पुनर्विलोकन याचिका प्रस्तुत करने में विलंब का कोई पर्याप्त हेतुक नहीं बताया गया था। इस आदेश से व्यथित होकर, प्रत्यर्थी ने अगस्त, 2020 में, उच्च न्यायालय में द्वितीय अपील संख्या

1253/2020 के साथ I.A. नंबर 2022/2020 प्रस्तुत की, जिसमें द्वितीय अपील प्रस्तुत करने में हुई विलंब को माफ करने की मांग की गई। उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश के द्वारा विलंब को माफ कर दिया और स्वीकृति के साथ-साथ स्थगन के लिए आवेदन पर सुनवाई के लिए द्वितीय अपील को सूचीबद्ध करने का आदेश दिया।

अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत निवेदन :

7. अपीलार्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय इस बात पर ध्यान नहीं दे पाया है कि प्रत्यर्थी ने विलंब को माफ करने के लिए 'पर्याप्त हेतुक' कैसे दर्शित किए, विशेषतः तब जब प्रत्यर्थी की पुनर्विलोकन याचिका को भी प्रथम अपीलीय न्यायालय के द्वारा विलंब के आधार पर खारिज कर दिया गया था क्योंकि उन्होंने दो साल से ज्यादा के विलंब से पुनर्विलोकन याचिका प्रस्तुत करने का कोई कारण नहीं बताया था। उन्होंने आगे प्रतिवाद किया कि यह सुव्यवस्थित विधि है कि 'पर्याप्त हेतुक' का अर्थ है कि पक्षकार को उपेक्षापूर्वक काम नहीं करना चाहिए था या उसे सम्यक् तत्परता का प्रयोग करना चाहिए था। इसलिए, अपीलार्थी का यह तर्क कि विलंब का कारण COVID-19 था, स्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि प्रत्यर्थी सतर्क नहीं रहा और वाद हेतुक महामारी आने से बहुत पहले ही उद्भूत हो गया था।

8. **शिव राज सिंह बनाम यूनियन ऑफ इंडिया, (2023) 10 SCC 531** के निर्णय को संदर्भित करते हुए आक्षेपित आदेश के संबंध में, जिसमें यह कहा गया है कि न्यायालयों को राज्य द्वारा प्रस्तुत अपील में विलंब के बारे में उदार दृष्टिकोण अपनाना चाहिए, अपीलार्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने न्यायालय का ध्यान **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सतीश चंद शिवहरे एंड ब्रदर्स, 2022 SCC ऑनलाइन SC 2151** के पैराग्राफ नंबर 17 और 22 की ओर आकर्षित किया, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था:

'17. उच्च न्यायालय में याचिकाकर्ताओं द्वारा विलंब की माफी के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदन के समर्थन में शपथ-पत्र में दिए गए स्पष्टीकरण, मध्यस्थता और सुलह अधिनियम की धारा 37 के तहत अपील प्रस्तुत करने में हुई 337 दिनों की बहुत अधिक विलंब को माफ करने के लिए पर्याप्त हेतुक नहीं बनाती है। परिसीमा विधि सरकार समेत सभी पर बाध्य है। रेड टेपिज़्म, फाइलों को आगे बढ़ाना और प्रोसेस की मुश्किलों के आम स्पष्टीकरण को पर्याप्त हेतुक नहीं माना जा सकता। शासकीय विभागों की यह ज़िम्मेदारी है कि वे यह सुनिश्चित करें कि सम्यक् तत्परता बरती जाए जिससे परिसीमा विधि के लागू होने से विधिक कार्यवाही शुरू करने का उनका अधिकार समाप्त न हो

जाए। विलंब की माफ़ी के लिए कोई अलग पैमाना तय नहीं किया जा सकता क्योंकि इसमें सरकार शामिल है।

XXX

22. जब किसी अपील पर गुणागुण के आधार पर विचार करने की तुलना परिसीमा के वर्जन के तकनीकी आधार पर किसी मेरिटोरियस क्लेम को खारिज करने से की जाती है, तो न्यायालय विलंब को माफ करने के लिए 'पर्याप्त हेतुक' के प्रति उदार दृष्टिकोण अपनाकर गुणागुण पर विचार करने की ओर झुकते हैं। परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के तहत किसी आवेदन पर विचार करने वाला न्यायालय अपील के प्रथमदृष्टया गुणागुण पर भी गौर कर सकता है। हालांकि, इस मामले में, याचिकाकर्ता अपील के लिए कोई ठोस प्रथम दृष्टया मामला बनाने में नाकाम रहे। इसके अलावा, जब विलंब का कोई सही कारण दिखाया जाता है, तो उदार दृष्टिकोण अपनाया जा सकता है। उदार दृष्टिकोण का अर्थ यह नहीं है कि अगर विलंब का कारण तुच्छ बताया गया हो, तब भी अपील स्वीकार की जानी चाहिए। न्यायालय को काम करने के सुस्त और धीमे तरीके से हुए बहुत अधिक विलंब को अनदेखा करके सभी व्यावहारिक प्रयोजनों के लिए परिसीमा को माफ नहीं करना चाहिए।'

9. अपीलार्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने **पथपति सुब्बा रेड्डी बनाम स्पेशल डिप्टी कलेक्टर, 2024 SCC ऑनलाइन SC 513** के निर्णय का अवलंब लिया, जिसमें पैराग्राफ नंबर 26(v) में कहा गया है: 'अगर पर्याप्त हेतुक बताया गया हो तो न्यायालय को विलंब माफ करने के लिए अपने विवेक का इस्तेमाल करने का अधिकार है, लेकिन इस अधिकार का प्रयोग अपने विवेक पर निर्भर करता है और अगर कई कारकों से पर्याप्त हेतुक साबित हो भी जाता है, तो भी इसका इस्तेमाल नहीं किया जा सकता, जैसे कि असाधारण विलंब, लापरवाही और सम्यक् तत्परता की कमी।' इसलिए, यह कहा गया कि इस न्यायालय को, सभी व्यावहारिक प्रयोजनों के लिए, प्रत्यर्थी की लापरवाही से किए गये कार्य से हुए विलंब को माफ करके परिसीमा का वर्जन नहीं करना चाहिए। यह अपील स्वीकार करने और आक्षेपित आदेश को अपास्त करने की मांग की गई।

प्रत्यर्थी-राज्य द्वारा प्रस्तुत निवेदन:

10. प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि द्वितीय अपील प्रस्तुत करने में हुई 1537 दिनों के विलंब में से, लगभग तीन साल प्रथम अपीलीय न्यायालय में पुनर्विलोकन याचिका प्रस्तुत करने में चले गए और दिनांक 30.09.2019 को इसके खारिज होने के बाद, जब तक द्वितीय अपील के

लिए प्रस्तुतिकरण प्रक्रिया शुरू हो पाती, तब तक COVID-19 महामारी आ गई और यह अगस्त, 2020 में ही फाइनल हो पाई। इसलिए, द्वितीय अपील प्रस्तुत करने में हुआ विलंब अनजाने में हुआ, किसी जानबूझकर की गई लापरवाही से तो बिल्कुल नहीं, और राज्य ने उच्च न्यायालय के समक्ष इस बारे में ठीक तरह से प्रतिवाद किया था। यह कहा गया कि इसलिए, द्वितीय अपील प्रस्तुत करने में हुए विलंब को माफ कर दिया गया। प्रत्यर्थी ने आगे निवेदन किया कि चूंकि वादग्रस्त संपत्ति महत्वपूर्ण और कीमती शासकीय ज़मीन थी, इसलिए इस न्यायालय को आक्षेपित आदेश को यथावत् रखना चाहिए क्योंकि इससे दोनों पक्षकारों को न्याय मिलेगा और अंततः मामले का गुणागुण के आधार पर निपटारा हो सकेगा। **बिहार राज्य बनाम कामेश्वर प्रसाद सिंह, (2000) 9 एससीसी 94** के मामले का अवलंब लिया गया।

11. प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि 'पर्याप्त हेतुक' शब्द का अर्थ ऐसा होना चाहिए कि इसे उदारपूर्वक समझा जा सके। **पश्चिम बंगाल राज्य बनाम प्रशासक, हावड़ा म्युनिसिपैलिटी, (1972) 1 SCC 366** में पारित विनिश्चय को संदर्भित करते हुए, प्रत्यर्थी ने कहा कि वर्तमान मामले में विशेषतः उदार अर्थान्वयन किया जाना चाहिए क्योंकि राज्य ने विधि के अधीन उपलब्ध उपचारों को अपनाने में कोई लापरवाही नहीं की है। इसके अलावा, यह भी प्रस्तुत किया गया कि COVID-19 कोई अप्रासंगिक वजह नहीं है, इसलिए राज्य को द्वितीय अपील प्रस्तुत करने में हुए विलंब के कारण दण्डित नहीं किया जाना चाहिए।

12. मामले के तथ्यों के संबंध में, प्रत्यर्थी ने इंगित किया कि विचारण न्यायालय ने प्रारंभ में मामला खारिज कर दिया था, अन्य बातों के साथ, इस आधार पर कि उसने अपने हक को प्रमाणित करने वाला कोई दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था और अपीलार्थी ने कपट भी किया था क्योंकि उसने कुछ ज़रूरी दस्तावेजों में फेरबदल किए थे। यह भी कहा गया कि यही वजह है कि उच्च न्यायालय द्वारा गुणागुण के आधार पर इस मामले की सुनवाई करना और भी ज़रूरी था। यह भी प्रस्तुत किया गया कि अपील खारिज कर दी जानी चाहिए और आक्षेपित आदेश को यथावत् रखा जाना चाहिए।

विश्लेषण, रीजनिंग और निष्कर्ष:

13. वर्तमान मामले में, अपीलार्थी के तर्क पहली नज़र में आकर्षक लगते हैं, क्योंकि राज्य को साधारण मुकदमेबाज की तुलना में असम्यक् अनुग्रह नहीं दिया जा सकता, विशेषतः परिसीमा के मामलों में। इसमें कोई संदेह नहीं है कि सभी पक्षकारों को, चाहे वे संविधान के अनुच्छेद 12 के तहत राज्य हों या नहीं, सम्यक् तत्परता से काम करने की आवश्यकता है।

14. विधि के सुव्यवस्थित सिद्धांत पर कोई विवाद नहीं हो सकता कि बिना पर्याप्त हेतुक के विलंब को माफ नहीं किया जा सकता, लेकिन एक महत्वपूर्ण पहलू जो ध्यान में रखा जाना चाहिए, वह यह है

कि अगर किसी विशिष्ट: मामले में गुणागुण की जांच की जानी है, तो उसे सिर्फ परिसीमा के आधार पर खत्म नहीं किया जाना चाहिए।

15. वर्तमान मामले में, प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष पुनर्विलोकन याचिका दो साल और चार महीने के विलंब से प्रस्तुत हुई थी और उच्च न्यायालय में द्वितीय अपील पुनर्विलोकन याचिका के खारिज होने की दिनांक यानी 30.09.2019 से लगभग एक साल के विलंब से प्रस्तुत हुई थी। एक पल रुककर, यह बताना ज़रूरी है कि वर्तमान मामले में, ज़मीन के हक का विवाद प्राइवेट पक्षकारों के बीच नहीं, बल्कि प्राइवेट पक्षकार और राज्य के बीच है। इसके अलावा, जब प्रश्नगत ज़मीन की बात हो रही है, जिसका राज्य ने कब्जा ले लिया हो और उसे युवा कल्याण विभाग और कलेक्टर को लोक प्रयोजनों के लिए आवंटित कर दिया था और वह अब भी राज्य के कब्जे में है, तो राज्य का यह दावा कि यह शासकीय ज़मीन है, उसे संक्षिप्ततः खारिज नहीं किया जा सकता। अभिलेख के परिशीलन से हमें यह पता चलता है कि अपीलार्थी ने वास्तव में ज़मीन पर कब्जा लेने के लिए निष्पादन कार्यवाही हेतु आवेदन किया था, जिससे यह साफ़ पता चलता है कि उस ज़मीन पर उसका कब्जा नहीं रहा था। इस तरह, हमारी सुविचारित राय में, इस मामले पर कई कारणों से, जैसे कि 1975-1976/1977-1978 में ज़मीन आवंटित किए जाने के अपीलार्थी के प्रारंभिक दावे के बाद एक नया ज़िला बनाया गया है, गुणागुण के आधार पर न्यायनिर्णयन करने की आवश्यकता है। इसलिए, दिनांक 01.10.2015 से, यानी जब प्रथम अपीलीय न्यायालय ने वाद को डिक्री किया, 1537 दिनों के विलंब में पुनर्विलोकन याचिका प्रस्तुत करने में दो साल और चार महीने की विलंब (जिसे स्वयं प्रथम अपीलीय न्यायालय ने विलंब के आधार पर खारिज कर दिया था) और उसके बाद उच्च न्यायालय में द्वितीय अपील प्रस्तुत करने में लगभग एक साल का विलंब शामिल है। यह विलंब मामले के विशिष्ट: तथ्यों और परिस्थितियों में हुआ, जो बार-बार दोहराने की कीमत पर उस ज़मीन से जुड़ी है जिस पर राज्य ने शासकीय ज़मीन होने का दावा किया है और जो उसके कब्जे में है, हमें आक्षेपित आदेश में दखल न देने के लिए मजबूर करती है। खास बात यह है कि प्रारंभ में विचारण न्यायालय ने वाद खारिज कर दिया था, जिस विनिश्चय को प्रथम अपीलीय न्यायालय ने उलट दिया था।

16. **रामचंद्र शंकर देवधर बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1974) 1 एससीसी 317** में न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

'10. ...परिवाद के हेतुक के उद्भूत होने के बाद से याचिका प्रस्तुत करने में दस या बारह साल से ज्यादा का विलंब हुआ, और प्रत्यर्थीगण ने प्रतिवाद किया कि यह विलंब याचिकाकर्ताओं को संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत याचिका में किसी भी अनुतोष से वंचित करने के लिए काफी था। हमें नहीं लगता कि यह बात हम पर लागू होना चाहिए।

प्रथमतः, यह याद रखा जाना चाहिए कि जो नियम कहता है कि न्यायालय देर से आए और पुराने दावों की जांच नहीं कर सकता, वह विधिक नियम नहीं है, बल्कि विवेक के उचित और तार्किक इस्तेमाल पर आधारित प्रैक्टिस का नियम है, और ऐसा कोई अलंघनीय नियम नहीं है कि जब भी विलंब हो, तो न्यायालय को याचिका पर विचार करने से मना कर देना चाहिए। हर मामला अपने तथ्यों पर आधारित होना चाहिए। यह सवाल, जैसा कि हिदायतुल्लाह, सी.जे. ने तिलोकचंद मोतीचंद बनाम एच.बी. मुंशी [(1969) 1 एस.सी.सी. 110, 116 : (1969) 2 एस.सी.आर. 824] में बताया है कि "यह न्यायालय के विवेक पर निर्भर करता है कि वह हर मामले में क्या करे। इसमें कोई न्यूनतम सीमा नहीं है और न ही कोई अधिकतम सीमा है। यह सब इस बात पर निर्भर करेगा कि मौलिक अधिकारों का उल्लंघन कैसे हुआ है और किस उपचार का दावा किया गया है और विलंब कैसे हुआ।"

(जोर दिया गया)

17. निस्संदेह, **रामचंद्र शंकर देवधर (उपरोक्त)** रिट याचिका से संबंधित है, लेकिन विधि का जो ब्योरा दिया गया है, वह स्पष्ट है। **शिव राज सिंह (उपरोक्त)** ने भी राज्य के कामकाज के अवैयक्तिक नजरिए पर विचार किया है, जिसमें **मणिपुर राज्य बनाम कोटिन लामकांग, (2019) 10 SCC 408** में संप्रेक्षित की गई बातों को ध्यान में रखा गया है। **ए बी गोवर्धन बनाम पी रागोथमन, (2024) 10 SCC 613** में, न्यायालय ने इस तरह विचार किया:

'37. कलेक्टर (एलए) बनाम काटिजी [कलेक्टर (एलए बनाम काटिजी, (1987) 2 एससीसी 107] में, न्यायालय ने टिप्पणी की कि वह विलंब को माफ करने में उचित रूप से उदार दृष्टिकोण अपना रहा था और "गुण-दोष के आधार पर न्याय" को "गुण-दोष के आधार पर निर्णय को विफल करने" के बजाय प्राथमिकता दी जानी चाहिए। यद्यपि, उसमें विलंब को माफ करने वाले उच्च न्यायालय के आदेश को पलटते हुए, विलंब की माफी के लिए आवेदन पर विचार करने का मार्गदर्शन करने वाले सिद्धांतों को ईशा भट्टाचार्य बनाम रघुनाथपुर नफर अकादमी [ईशा भट्टाचार्य बनाम रघुनाथपुर नफर अकादमी, (2013) 12 एससीसी 649: (2014) 1 एससीसी (सिविल) 713: (2014) 4 एससीसी (क्रि) 450: (2014) 2 एससीसी (एल एंड एस) 595] में निकाला गया था। इसमें ध्यान में रखे गए कारकों में से एक यह था न्याय सर्वोपरि है [ईशा भट्टाचार्य का पैरा 21.3 [ईशा भट्टाचार्य बनाम रघुनाथपुर नफर अकादमी, (2013) 12 एससीसी 649: (2014) 1 एससीसी (सिविल) 713: (2014) 4 एससीसी (क्रि) 450: (2014) 2 एससीसी (एल एंड एस) 595]]।

38. एन.एल. अभ्यंकर बनाम भारत संघ [एन.एल. अभ्यंकर बनाम भारत संघ, 1994 एससीसी ऑनलाइन बॉम्बे 574: (1995) 1 महाराष्ट्र एलजे 503] में, नागपुर में बॉम्बे उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने, संविधान के अनुच्छेद 226 के संबंध में विलंब के संदर्भ में, डेहरी रोहतास लाइट रेलवे कंपनी लिमिटेड बनाम जिला बोर्ड, भोजपुर [डेहरी रोहतास लाइट रेलवे कंपनी लिमिटेड बनाम जिला बोर्ड, भोजपुर, (1992) 2 एससीसी 598] में निर्णय पर विचार किया और अभिनिर्धारित किया कि: (एन.एल. अभ्यंकर मामला [एन.एल. अभ्यंकर बनाम भारत संघ, 1994 एससीसी ऑनलाइन बॉम्बे 574: (1995) 1 महाराष्ट्र एलजे 503], एससीसी ऑनलाइन बॉम्बे पैरा 22)

"22..... इस मामले में उच्च न्यायालय के तर्कसंगत विवेक के प्रयोग का वास्तविक परीक्षण यह नहीं है कि समय कितना निकल गया है, बल्कि यह है कि क्या विलंब की वजह से याचिकाकर्ता की तरफ से कोई उपेक्षा हुई है, जिससे यह अनुमान लगाया जा सके कि उसने अपना दावा का त्याजन कर दिया है या याचिकाकर्ता के रिट न्यायालय के समक्ष जाने से पहले ही, तीसरे पक्षकार के अधिकार सृजित हो गए थे, जिन्हें तब तक परेशान नहीं किया जाना चाहिए जब तक विलंब का कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण न दिया गया हो।"

(जोर दिया गया)

39. बंबई उच्च न्यायालय द्वारा एन.एल. अभ्यंकर मामले में विधि की सुस्थापित स्थिति पर दिए गए स्पष्ट विनिश्चय [एन.एल. अभ्यंकर बनाम भारत संघ, 1994 एससीसी ऑनलाइन बॉम्बे 574: (1995) 1 मह एलजे 503] को म्युनिसिपल काउंसिल, अहमदनगर बनाम शाह हैदर बेग [म्युनिसिपल काउंसिल, अहमदनगर बनाम शाह हैदर बेग, (2000) 2 एससीसी 48] और मूल चंद्र बनाम भारत संघ [मूल चंद्र बनाम भारत संघ, (2025) 1 एससीसी 625: 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 1878] में अनुमोदित किया गया।

40. ऊपर बताए गए प्राधिकारियों के विनिश्चयों को देखते हुए, न्याय के उद्देश्य हेतु उदार दृष्टिकोण अपनाते हुए, हम विलंब को माफ़ करते हैं और IA No. 16203/2019 को स्वीकार करते हैं, बशर्ते अपीलार्थी प्रत्यर्थी को Rs 20,000/- (बीस हजार रुपये) खर्च के रूप में दे।

(जोर दिया गया)

18. ऊपर दिए गए निर्णयों और मामले के पूर्ण विश्लेषण को ध्यान में रखते हुए, हमारी राय है कि द्वितीय अपील सुनवाई योग्य है, उस पर बहस होनी चाहिए और गुणागुण के आधार पर विनिश्चय होना चाहिए। हालांकि, प्रत्यर्थी को चेतावनी दी जाती है कि वह आगे और भविष्य में ऐसे मामलों में तत्परता दिखाए, नहीं तो न्यायालय उतना उदार नहीं होगा।

19. तदनुसार, यह अपील खारिज की जाती है। आक्षेपित आदेश को खर्चों के साथ यथावत् रखा जाता है।

20. खर्चों के संबंध में कोई आदेश नहीं। I.A.s क्रमांक 62432/20244 और 62433/20245 को स्वीकार किया जाता है।

21. अपीलार्थी को अपने विधिक उपचारों को अपनाने में हो रही मुश्किलों को कुछ हद तक कम करने के लिए, हम यह उचित समझते हैं कि प्रत्यर्थी अपीलार्थी को Rs.50,000/- (पचास हजार रुपये) खर्च के रूप में दे, जिसके तहत द्वितीय अपील प्रस्तुत करने में हुए विलंब को माफ किया गया माना जाए। यह संदाय आज से एक महीने के अंदर किया जाए। ऐसा न करने पर द्वितीय अपील हमेशा के लिए खारिज कर दी जाएगी।

22. इसके अलावा, अगर संदाय ऊपर बताई गई समय सीमा के अंदर किया जाता है, तो उच्च न्यायालय से अपेक्षा है कि वह द्वितीय अपील को प्राथमिकता पर ले और उसे त्वरित निपटाने की कोशिश करे।

23. हमारी टिप्पणियां सिर्फ आक्षेपित आदेश के संदर्भ में हैं। इनसे द्वितीय अपील में किसी भी पक्षकार को न तो मदद मिलेगी और न ही नुकसान होगा। पक्षकारों को उच्च न्यायालय के समक्ष गुणागुण के आधार पर तथ्य और विधि के सभी तर्क रखने की स्वतंत्रता है।

मामले का परिणाम: अपील खारिज।

(अनुवादक- सुरभि अग्रवाल)